विद्यार्थियों की आदर्श जीवनचर्या

(कुछ प्रेरक दृष्टान्त)

(श्रद्धेय डॉ० विश्वामित्र जी महाराज)

'कल्याण' के जनवरी 2010 के जीवनचर्या-अङ्क से

विद्याएँ दो हैं, एक 'अपरा' विद्या अर्थात् संसारी विद्या है और दूसरी 'परा' विद्या अर्थात् आध्यात्मिक ज्ञान है। पहली व्यक्ति की पेट-पूजा के लिये आवश्यक है और दूसरी परमात्मा की पूजा के लिये अनिवार्य है। सफल जीवन के लिये इन दोनों विद्याओं का समन्वय अपरिहार्य है।

प्रत्येक प्राणी की जन्म से मरण तक एक ही मौलिक माँग है-हरेक सुख चाहता है। जीव का हर प्रयास इसी की प्राप्ति के लिये है। यदि यह जान लिया जाय कि हमें कैसा सुख चाहिये तो आगे की यात्रा बहुत सहज हो जायगी। हम चाहते हैं ऐसा सुख जो सब से मिले, सब जगह मिले और हर समय मिले। ऐसा सुख जो सर्वत्र मिले, सर्वदेश, सर्वकाल में मिले, प्रचुर मात्रा में मिले, बिना परिश्रम मिले तथा पराधीन न हो, ऐसे सुख को परम सुख कहा जाता है, शाश्वत-सुख (eternal happiness) कहा जाता है। इसी सुख की प्राप्ति है प्रत्येक प्राणी के जीवन का लक्ष्य। हम पढ़ाई कर रहे हैं इसी सुख के लिये, कल को व्यापार या नौकरी करेंगे इसी सुख के लिए, विवाह होगा, सन्तान होगी, इसी सुख की प्राप्ति के लिये इत्यादि। खोज इसी सुख की है, परंतु मिल तो यह नहीं रहा है। तो भूल कहाँ है? अनश्वर सुख की जगह नश्वर क्यों मिल रहा है? आज के जो विद्यार्थी हैं, वे ही कल के देश के नागरिक एवं कर्णधार होंगे। उन्हें अपने जीवन-लक्ष्य की प्राप्ति हो सके, इसके लिये कतिपय दृष्टान्तों एवं महापुरुषों के जीवन से सम्बन्धित प्रेरक प्रसंगों को प्रस्तुत किया जा रहा है। इनमें निहित शिक्षाओं को अपनी जीवनचर्या में उतार कर वे अपने जीवन के शाश्वत लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं।

(1)

एक राज कन्या अपनी सखियों के साथ जल-क्रीड़ा के लिये गयी है। सरोवर के किनारे राज कन्या ने अपना अनमोल गले का हार उतार कर रख दिया। सभी स्नान का सुख लेकर, जल से बाहर निकल, अपने-अपने कपड़े पहन रही हैं। राज कन्या का नौलखा हार नहीं मिल रहा। किसी सहेली की शरारत नहीं क्योंकि सभी सरोवर के भीतर थीं। इधर-उधर खोजने पर भी न मिला। महल पहुँच कर राजा को सूचना दी गयी, नगर में घोषणा हुई, जो ढूँढ़ कर लौटायेगा, उसे एक लाख रुपये इनाम मिलेगा। खोज शुरू, लेकिन सभी असफल। एक लकड़हारा प्यास से व्याकुल हो पानी पीने के लिये उसी सरोवर के किनारे गया। पानी पीते-पीते, उसे हार नीचे तल पर पड़ा दिखायी दिया। उसकी प्रसन्नता की सीमा न रही, डुबकी लगायी, हार पकड़ने की कोशिश की, परंतु हाथ में हार नहीं, कीचड़ आता है। बाहर निकला, जल निश्चल हुआ, पुन: हार दिखा, डुबकी लगायी, फिर हाथ में पंक। जा कर राजा को सूचना दी। विशेषज्ञ बुलवाये गये, उनके भी सभी प्रयास विफल। सब चकित एवं निराश। एक सन्त का आगमन हुआ, भीड़ का कारण पूछा? समस्या सुनी-कुशाग्र बुद्धि थे, अविलम्ब समझ गये-हार ऊपर पेड़ पर लटक रहा था, जिसे पंछी उठाकर अपने घोंसले में ले गया था, उसी का प्रतिबिम्ब जल में दिखायी दे रहा था। छाया को कैसे पकड़ा जाय? अत: सब के हाथ में कीचड़। हम चाहते तो बिम्ब हैं-परम सुख और पकड़ रहे हैं प्रतिबिम्ब को, नश्वर-सुख को, तो हाथ कीचड़ ही आता है अर्थात् दु:ख या दु:ख युक्त सुख ही जीवन भर मिलता है। हमारी खोज ही त्रुटिपूर्ण है। उस सुख को पाने के लिये यात्रा शुरू करो। कैसे?

सदा स्मरणीय तथ्य याद रखें-प्रतिबिम्ब से वस्तु प्राप्त नहीं होती, अत: बिम्ब को पकड़ो अर्थात् उसे पकड़ो, जहाँ सुख निवास करता है।

विषय-सुख या सांसारिक सुख उस परमानन्द परम सुख की परछाई है। अत एव संसार से कभी सुख नहीं मिलेगा। शान्ति, सुख और आनन्दरूपी हीरों का जिसे हम संसार में प्रतिबिम्ब की तरह पाने की कोशिश कर रहे हैं और निराश होते हैं-कीचड़ अर्थात् दु:ख बार-बार हाथ लगता है, उस सुख-शान्ति-आनन्द का स्त्रोत है परमात्मा अर्थात् बिम्ब। इसी की प्राप्ति है प्रत्येक के जीवन का लक्ष्य।

कृपया पृष्ठ पलटिए

(2)

आचार्य विनोबा भावे एक आँखों-देखी घटना सुनाया करते, 'मैं रेल-यात्रा कर रहा था, डिब्बा खचाखच भरा था, एक स्टेशन से एक वृद्ध भिखारी फटे-पुराने कपड़े, पिचका पेट, बिखरे बाल, धँसी हुई आँखें, लाचारी का ढाँचा शरीर उसी डिब्बे में प्रविष्ट हुआ। यात्री उतर-चढ़ रहे थे। गाड़ी चल पड़ी। सभी अपनी-अपनी सीटों पर बैठ गये। भिखारी ने भजन गाना शुरू किया, आवाज में अद्भतु माधुर्य, जादू ! सभी यात्री चुप, भजनानन्द में डूब गये। वृद्ध भजन गाता इधर-उधर आ-जा रहा था। भजन का अर्थ था-'परमात्मा की कृपा के बिना कुछ नहीं होता, वह न दे तो कोई कुछ पा नहीं सकता। वह दाता शिरोमणि देता ही देता है।' एक अमीर जमींदार ने भिखारी से पूछा-'दिन भर भजन गाकर कितना कमा लेते हो?' उत्तर मिला-'दो-चार आने मिल जाते हैं। रामेच्छा से जो मिल रहा है, ठीक है, उसी में खुश हूँ।' 'यह लो एक रुपया कई दिन चलेगा, किंतु भजन नहीं, कोई फिल्मी गीत सुनाओ।' साधु नहीं माना मैं भजन ही गाता हूँ।' अच्छा 100 रुपये ले लो, शेष जीवन सुख से निकलेगा, गाड़ी में भजन गाने की जरूरत नहीं पड़ेगी। अब तक क्या मिला भजन गा-गा कर? अब फिल्मी गीत गाया करो।' 'नहीं बाबू जी ! क्षमा करें, कुछ रुपयों के लिये मैं अपना लक्ष्य नहीं बदल सकता, सन्मार्ग से भटक नहीं सकता। कुछ मिले न मिले, मैं भजन ही गाऊँगा।'

एक भिखारी अपनी गरीबी-भूख मिटाने के लिये, बदन ढकने के लिये प्रभु के मार्ग से हटना नहीं चाहता। कितने हैं ऐसे जिन्हें भौतिक सुख नहीं, अविनाशी सुख चाहिये? एक भिखारी ने राम-पथ चुन रखा है, उसे इसी में सन्तोष है, इस मार्ग पर उसे आनन्द मिलता है। वह भिखारी नहीं सम्राट् है। विनोबा जी समझाते हैं-लक्ष्य तो है प्रभु-प्राप्ति, परंतु व्यक्ति सांसारिक सुखों को लक्ष्य मान इसमें खो कर असली लक्ष्य को भूल जाता है, अत: भटकता रहता है, सदा दु:खी रहता है। बुद्धिमत्ता इसी में, भलाई भी इसी में कि हम लक्ष्य पर अडिग रहें। लक्ष्य निश्चित हो गया तो अब यात्रा शुरू करते हैं।

आज स्कूल-कॉलेजों में जो विद्या दी जा रही है, वह हमें रोटी-रोजी (आजीविका) कमाने योग्य बनाती है। अत: यह विद्या बन्द नहीं करनी, पूरी तत्परता से इसे पूरा करना है, पर साथ-ही-साथ परा-विद्या का मिश्रण भी हो, तभी जीवन में पूर्णत्व की प्राप्ति होगी। अन्यथा अधूरापन बना रहेगा।

(3)

एक सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक विदेश से भारत पधारे। उन्होंने किसी भारतीय सन्त से भेंट की हार्दिक इच्छा प्रकट की। दर्शनार्थ प्रबन्ध किया गया। वैज्ञानिक महोदय ने सन्त से पूछा-'आधुनिक विज्ञान के बारे में आपकी क्या राय है?' सन्त ने कहा-'मेरी दृष्टि में इसका कोई मूल्य नहीं।' वैज्ञानिक चकित एवं व्यथित, कहा-'जिस विज्ञान ने मनुष्य को इतनी सुख-सुविधाएँ प्रदान कीं, उसे आप निरर्थक बता रहे हैं?' महात्मा ने कहा-'आपकी इस वर्णित उपलब्धि से मैं सहमत हूँ, परंतु विज्ञान की सबसे बड़ी हार है कि वह मानव को मानव की भाँति जीना न सिखा सका, परस्पर प्रेम करना, दूसरों के काम आना, उन्हें सुख बाँटना न सिखा सका। मानव में मानवता प्रकट करने की योग्यता सांसारिक विद्याओं में नहीं है, यह महान् कार्य परा-विद्या ही कर सकती है।' चूँकि हमें इन्सान की भाँति, एक नेक इन्सान की भाँति रहकर जीवन-यापन की उत्कट इच्छा है, अत एव दोनों विद्याओं का समन्वय अति आवश्यक है। प्राय: कहते सुना जाता है, 'अमुक व्यक्ति डॉक्टर तो बहुत अच्छा है, पर इन्सान किसी काम का नहीं, चरित्र हीन है, क्रोधी है, लोभी है।' गुणवान् बनना तथा दुर्गुणहीन मनुष्य बनना परा-विद्या ही सिखाती है। मानवता अनमोल है।

(4)

डॉक्टर सी०वी० रमण एक सुप्रसिद्ध भारतीय वैज्ञानिक हुए हैं। इन्हें अपने कार्य में सहायता हेतु एक युवा वैज्ञानिक की आवश्यकता थी। अनेक अभ्यर्थी साक्षात्कार के लिये पधारे, परंतु सभी अयोग्य घोषित किये गये। कोई पसन्द नहीं आया। सभी लोग तो चले गये, पर एक अभ्यर्थी रमण जी को उनके ऑफिस के बाहर चक्कर लगाता दिखा, पूछा-'जब तुम reject कर दिये गये हो, तो व्यर्थ में आगे-पीछे क्यों घूम रहे हो?' युवक ने कहा, 'सर आप नाराज़ न हों। आने-जाने के लिये आपके ऑफिस की ओर से जो खर्चा दिया जाता है, गलती से मुझे अधिक दिया गया है, उसे लौटाने के लिये क्लर्क को ढूँढ़ रहा हूँ।' रमण जी ने तुरन्त कहा- 'You are selected'। वैज्ञानिक क्षेत्र की कमी तो मैं पढ़ा कर, सिखा कर पूरी कर दूँगा, परंतु गुणी, चरित्रवान् बनना तो मैं नहीं सिखा सकता। सांसारिक विद्या बेशक बहुत कुछ सिखा सकती है, पर इन्सान बनना नहीं सिखा सकती। यह परा-विद्या ही सिखायेगी। अत एव सार्थक, सम्पूर्ण जीवन के लिये इन दोनों विद्याओं का सम्मिश्रण हो। दोनों में से किसी एक का वरण न व्यावहारिक ही लगता है और न ही सही।

कृपया पृष्ठ पलटिए

(5)

एक चित्रकार, चित्रकला में अति कुशल, सजीव चित्र बनाता। एक बार उसने एक नन्हें बालक का चित्र बनाया। भोला-भाला मुख इतना आकर्षक कि लाखों ने खरीद कर अपने घरों में लगाया। गृहों की शोभा बन गया वह चित्र। चित्रकार अति प्रसन्न, सुविख्यात हो गया। जब वह वृद्ध हो गया तो सोचा, आज जीवन का अन्तिम चित्र किसी ऐसे दुष्ट, क्रूर, अपराधी का बनाऊँगा जिसकी आकृति से उसकी क्रूरता इस प्रकार झलके कि उस रचना को देख लोग कुकर्म-अपराध करना बन्द कर दें। ऐसे व्यक्ति की खोज में एक जेल में गया। अनेक बन्दी, अपराधी देखे, एक पसन्द आ गया। उसके पास बैरक के बाहर बैठ उसका चित्र बनाना शुरू किया। अपराधी ने पूछा-'मिस्टर! क्या कर रहे हो?' 'आपका चित्र बना रहा हूँ।' 'मुझ में ऐसा क्या है?' चित्रकार ने मासूम बालक का चित्र दिखाते हुए कहा-'बन्धु! अनेक वर्ष पहले मैनें इसे बनाया था। लोगों को बेहद पसन्द आया था, आज आपका बनाना चाहता हूँ।' चित्र को देखकर बन्दी की आँखों में आँसू आ गये। चित्रकार ने कहा-'लगता है चित्र देख आपको अपने पुत्र की याद आ गयी। कृपया क्षमा करें, मैने आपकी भावनाओं को आहत किया है।' 'नहीं चित्रकार ! यह चित्र मेरे बच्चे का नहीं, मेरा है-अपने बचपन और वर्तमान को देख रोना निकल गया। कुसंस्कारों एवं कुसंग के कारण और सुसंस्कार न मिलने के कारण दुष्प्रवत्तियों से प्रेरित होकर मैं एक क्रूर अपराधी बन गया। काश! मुझे कोई सन्मार्ग दिखाने वाला मिल जाता, जिसकी सत्संगति से मेरे सुसंस्कार उभर सकते, मैं भी ईश्वरोन्मुख हो सकता तथा उन महानतम से युक्त होकर उन की कृपा का, दया-करुणा का तथा उनके प्यार का पुण्य पात्र बन सकता, तो आज यह दुर्दशा न होती।' विद्यार्थियो! सत्संगति का वरण करोगे तो कुसंगति से बचे रहोगे और जीवन में दिव्यता आ जायगी। यही स्थान है जहाँ परा-विद्या सिखायी जाती है। यह हमें झुकना सिखायेगी, विनम्र बनना, अपने अभिमान को मारना सिखायेगी, हमें मानव बनना सिखायेगी, पशुता को मारेगी और मानवता को उभारेगी। सबसे प्रेम करना तथा अपने भीतर से वैर-विरोध-घृणा का उन्मूलन करना सिखायेगी यह विद्या। दुर्गुणों-दोषों, दुर्बलताओं को दूर कर हमें सद्गुणों जैसे-सद्भावना, सहनशीलता, क्षमा, संयम आदि से सम्पन्न करेगी यह विद्या। हमें यह नहीं सोचना की अन्य न तो करते हैं, न कर ही पाये हैं तो हम क्यों करें? नहीं, और सुधरें न सुधरें, हमें अपना सुधार करना है। तब परमात्मा हमारा उद्धार करेगा। उद्धार उन्हीं का, जो चलने-आगे बढ़ने का अभ्यास जारी रखेंगे।

(6)

एक बार एक राजा को गणित सीखने की इच्छा हुई। एक महान् गणितज्ञ को आमन्त्रित किया गया। राजा ने निवेदन किया-'पढ़ाने की कृपा करें।' गणितज्ञ ने आग्रह स्वीकार कर शिक्षा प्रारम्भ की। काफी समय बाद भी गणित राजा की समझ में नहीं आया। जैसे शिष्यों की प्राय: सोच होती है, वैसे ही सोचा-गुरु कच्चे हैं, अत: पूछा-' श्रीमन्! क्या गणित सीखने का कोई सरल और सुविधापूर्ण उपाय नहीं है?' गम्भीर स्वर में शिक्षक ने कहा-'महाराज! आप राजा हैं, आपके लिये सुन्दर राजमार्ग की व्यवस्था है, आराम के लिये सुखद व्यवस्था है, परंतु विद्यार्थी के लिये विद्यार्जन का एक ही मार्ग है-एकाग्रता और अभ्यास। इस मार्ग पर ऐसे ही चलना पड़ेगा, हम दोनों मिलकर भी इसे आसान नहीं बना सकते।' बात समझ में आ गयी। कालान्तर में राजा एकाग्र हो अभ्यास से एक श्रेष्ठ गणितज्ञ बने।

विद्यार्थियो! इस सर्वोत्तम उपलब्धि की तैयारी में लग जाओ। जीवन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण अवस्था से गुजर रहे हैं आप। यौवन आते तथा ढलते समय पता भी नहीं लगेगा, तब प्रवेश होगा जीवन की सर्वाधिक दर्दनाक अवस्था-वृद्धावस्था का। जीवन रूपी इमारत की नींव, चट्टान-जैसी पक्की तथा मजबूत हो, इसके लिये भरसक प्रयत्न तथा लगन की जरूरत है। कैसे शुरू करें? विद्या-उपार्जन के लिये, स्वस्थ शरीर और मन के लिए, चरित्र-निर्माण के लिये, नैतिक जीवन के लिये अपनी समस्त ऊर्जा को लगा दो और परमेश्वर से युक्त होकर, उनके समर्पित होकर बल, उत्साह, धैर्य एवं सामर्थ्य प्राप्त करके जीवन-युद्ध में एक महान् योद्धा की तरह लड़ने को तैयार हो जाओ। फलत: शान्तिपूर्ण जीवन बीतेगा। अत: शरीर स्वस्थ रखें-यहीं से यात्रा का शुभारम्भ हो।

(7)

एक युवक स्वामी विवेकानन्द के पास आया, बोला-'मैं आपसे गीता पढ़ना चाहता हूँ।' स्वामी जी ने युवक को देखकर कहा-'छ: माह रोज दो घण्टे फुटबाल खेलो, फिर आओ तब गीता जी पढ़ाऊँगा।' युवक चकित -

कृपया पृष्ठ पलटिए

भला, गीता जी और फुटबाल का क्या सम्बन्ध? स्वामी जी ने समझाया-'बेटा! भगवद्गीता वीरों का शास्त्र है- एक सेनानी द्वारा एक महारथी को दिया दिव्य उपदेश है। अत: पहले शरीर का बल बढ़ाओ। शरीर स्वस्थ होगा तो समझ भी परिष्कृत होगी—गीता जी-जैसा कठिन विषय आसानी से समझ सकोगो। जो शरीर को स्वस्थ नहीं रखता, सशक्त, सजग नहीं रख सकता अर्थात् जो शरीर को नहीं सम्भाल पाया, वह गीता जी के विचारों को, अध्यात्म को कैसे सम्भाल सकेगा, जीवन में कैसे उतार सकेगा? उसे पचाने के लिये स्वस्थ शरीर और स्वस्थ ही मन चाहिये।' विद्यार्थियो! स्वस्थ शरीर के लिये आवश्यक है—प्रात: जागना, हल्का व्यायाम, पौष्टिक भोजन, नियमित दिनचर्या तथा ब्रह्मचर्य का पालन। मन को स्वस्थ रखने के लिये रोज गीता जी या रामायण जी का पाठ। इस से इस सर्वशक्तिमयी सत्ता से जुड़े रहेंगे। यही सन्मार्ग पर अविचल तथा सन्तुलित रखेगी। इस समय सारी ऊर्जा विद्या-उपार्जन के लिये तथा चरित्र-निर्माण के लिये प्रयोग करें।

(8)

स्वामी विवेकानन्द पगड़ी, धोती पहने शिकागो की सड़क से गुजर रहे थे। उनकी वेश-भूषा अमेरिका वासियों के लिये हँसी-मजाक का विषय थी। पीछे चलती महिला ने व्यंग्य किया, 'देखो! महाशय ने कैसी अनोखी Dress पहनी है।' स्वामी जी रुके, भद्र महिला से बोले-'बहन! तुम्हारे देश में कपड़े ही सज्जनता की कसौटी हैं, पर जिस देश से मैं आया हूँ, वहाँ सज्जनता की पहचान कपड़ों से नहीं, व्यक्ति के चरित्र से होती है।'

जब तक पढ़ाई खत्म नहीं होती, राजनीति से दूर रहें। अध्यापकों, वृद्धों अर्थात् घर-बाहर के बड़ों को पूरा सम्मान दें; चरण छू कर उनके आशीर्वाद जरूर लें। याद रखें- स्कूल, कॉलेज एवं विश्वविद्यालय की विद्या केवल पेट-पूजा के लिये योग्य बनाती है, अत: आवश्यक है ; पर वास्तविक नहीं। क्यों? इससे सत्य नहीं जाना जा सकता अर्थात् मोक्ष, परम-सुख, परम-शान्ति प्रदान करने में यह असमर्थ है। परम-सुख, जो प्रत्येक मानव का लक्ष्य है, उसकी प्राप्ति की तैयारी अभी से, इसी आयु से कर लेनी चाहिये। सूर्य उदय होते ही यात्री घर से निकलेगा तो अँधेरा होने से पूर्व गन्तव्य तक पहुँच जायगा परन्तु जो चलेगा ही सूर्यास्त के समय, वह कहाँ पहुँच पायेगा? जीवन का सबसे खराब समय है वृद्धावस्था, उसमें कुछ भी न हो सकेगा। अत: खोज अभी से आरम्भ हो।

प्रिय विद्यार्थियो! युवको एवं कल के गृहस्थो! इस परम-सुख, परमानन्द, अविनाशी सुख की प्राप्ति के लिये निम्न साधनों पर विचार करें-

1. शरीर स्वस्थ न हो-तबियत ठीक न हो तो पढ़ाई में मन नहीं लगता, अस्वस्थ शरीर उल्लेखनीय उपलब्धि नहीं कर सकता। अत: ऐसे नियमों का पालन करें, उपाय करें, जिनसे शरीर स्वस्थ रहे।
2. उपार्जित धन अपने लिये, अपनों के लिये एवं दूसरों की सेवा के लिये हो। धन ईमानदारी एवं मेहनत से कमाया गया हो। धन की पवित्रता अनिवार्य है, इससे मन की पवित्रता पर प्रभाव पड़ता है।
3. बुद्धि विवेक-युक्त हो अर्थात् बोध हो कि पाप क्या है? पुण्य क्या है? क्या करना है, क्या नहीं करना है?
4. सबसे प्रेम अर्थात् सबके प्रति सद्भावना हो तथा सब की सेवा, संसार को सेवा स्थली समझ कर करें।

- इन सब बातों का बोध एवं अनुपालन तब सहज हो जाता है, जब व्यक्ति सत्संग के माध्यम से परमात्मा से जुड़ जाय। जुड़ने का अर्थ है परमेश्वर द्वारा की गयी मेहरबानियों के लिये, दी गई वस्तुओं तथा सुख-सुविधाओं के लिए उनका सदा स्मरण करते रहना। कृतज्ञ बनना, कृतघ्न नहीं। उनका सतत स्मरण कृतज्ञता है और विस्मरण कृतघ्नता। स्मरण करते रहने का सुगमतम ढंग है-भगवन्नाम-जप।

यात्रा पर जाते हैं तो टिकट खरीदते हैं तब निश्चिन्त निर्भय तथा सुरक्षित बैठते हैं। टिकट न हो तो भयभीत एवं अपमानित होना पड़ेगा। परमात्मा से जुड़ना भी टिकट ले कर यात्रा करने के समान ही है।

-इन शिक्षाओं को अपने जीवन में उतारने से धीरे-धीरे व्यक्ति ईश्वर के प्रति समर्पित हो जाता है और परमेश्वर उसके जीवन का संचालक बन जाता है, तब समूचे जीवन का दिव्यीकरण हो जाता है, सांसारिक एवं आध्यात्मिक जीवन मिल कर एक हो जाते हैं और लक्ष्य प्राप्त कर जन्म सार्थक तथा सफल हो जाता है।

— o —